# 16. शिरीष के फूल

## आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

### लेखक परिचय –

भारतीय संस्कृति, धर्म, दर्शन और इतिहास के आख्याता, प्रसिद्ध निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक एवं सफल अध्यापक रहे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1907 ई० में बलिया जिले (उत्तरप्रदेश) के 'आरत दुबे का छपरा' नामक गाँव में हुआ। इनके पिता का नाम श्री अनमोल द्विवेदी एवं माता का नाम श्रीमती ज्योतिष्मती था। इनके जन्म का नाम बैजनाथ था। जन्म के समय पिता को किसी मुकदमें में एक हजार रुपये की प्राप्ति होने पर इनके पिता ने इनका नाम हजारी प्रसाद रख दिया। इनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। इन्होंने संस्कृत, बंगाली, हिन्दी, अंग्रेजी, भाषाओं का गहन अध्ययन किया। ये ज्योतिशशास्त्रविद् भी थे। ये शांतिनिकेतन, काशी एवं पंजाब के विश्वविद्यालयों में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष रहे। सन् 1949 ई० में लखनऊ विश्वविद्यालय ने डी०लिट्० की उपाधि से सम्मानित किया एवं सन् 1957 में भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया। 19 मई सन् 1979 को आपका देहावसान हुआ।

द्विवेदी जी का साहित्य सम्बन्धी दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक एव उदार है। उनका मानना है कि साहित्य मानव सापेक्ष है। मनुष्य को क्षुद्रता और संकीर्णता से उबारकर, सात्त्विक व्यापक भावभूमि पर प्रतिष्ठित करना साहित्य का लक्ष्य है। द्विवेदी जी का कहना है कि मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोदीप्त न बना सके, जो हृदय को परदुःख कातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।

द्विवेदी जी ने आलोचना, निबन्ध, इतिहास, उपन्यास, संस्कृति आदि विविध क्षेत्रों में अपनी साहित्यिक प्रतिभा का परिचय दिया है । इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं – **निबन्ध**– 'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'विचार और वितर्क', 'कुटज', 'विचार–प्रवाह', 'आलोक पर्व'। **'उपन्यास** –'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्रलेख', 'पुनर्नवा', 'अनामदास का पोथा'। **आलोचना, साहित्येतिहास** – 'सूर-साहित्य', 'कबीर', 'नाथ सम्प्रदाय', 'मध्यकालीन बोध का स्वरूप', 'कालिदास की लालित्य योजना', 'साहित्य सहचर', 'साहित्य का धर्म', हिन्दी साहित्य की भूमिका, 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल', हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास। **संपादित** –'नाथ–सिद्धों की बानियाँ', 'संदेश रासक', 'संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो', 'विश्वभारती (शांतिनिकेतन पत्रिका का सम्पादन)। **धर्म एवं संस्कृति विषयक** – 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद', 'मध्य-कालीन धर्म साधना', 'सहज साधना'।

### पाठ परिचय –

प्रस्तुत ललित निबन्ध 'शिरीष के फूल' लेखक के 'कल्पलता' नामक निबन्ध संग्रह से संकलित है। यह संदेश प्रधान निबन्ध है, जिसमें द्विवेदी जी ने आँधी, लू और गरमी की प्रचण्डता में अविचल होकर कोमल पुष्पों का सौन्दर्य बिखेरने वाले शिरीष की तुलना अवधूत से करते हुए मनुष्य की अजय जिजीविषा और

तुमुल कोलाहल, संघर्ष के बीच धैर्यपूर्वक लोक-चिन्तन हित रह कर्त्तव्यशील रहने को महान मानवीय मूल्य के रूप में स्थापित किया है। लेखक ने शिरीष के माध्यम से इस दार्शनिक सत्य को भी अभिव्यक्त किया है कि मनुष्य को यह समझ लेना चाहिए कि संसार परिवर्तनशील है और परिवर्तन की गति के अनुरूप अपने को ढाल लेना ही अच्छा है। संसार का सत्य यही है कि जो वस्तु एक दिन पल्लवित और पुष्पित हुई है उसका झड़ना निश्चित है। मनुष्य को अनासक्त भाव से जीवन यापन करना चाहिए। जो जितना अनासक्त हो सकता है, वह उतना ही अधिक समाज के लिए योगदान दे सकता है। अनासक्ति के साथ-साथ फक्कड़ाना मस्ती भी जरूरी है। कबीर के फक्कड़ व्यक्तित्व की तुलना अवधूत से करने के बाद वे गाँधी को भी इसी श्रेणी में रखते हैं। उनके अनुसार कालिदास भी अनासक्त कवि थे। इसलिए वे कालजयी हो सके।

**मूल पाठ–**

जहाँ बैठ के यह लेख लिख रहा हूँ उसके आगे पीछे दाँए-बाँए, शिरीष के अनेक पेड़ हैं। जेठ की जलती धूप में, जबकि धरित्री निर्धूम अग्निकुंड बनी हुई थी, शिरीष नीचे से ऊपर तक फूलों से लद गया था। कम फूल इस प्रकार की गरमी में फूल सकने की हिम्मत करते हैं । कर्णिकार (वनचंपा) और आरग्वध (अमलतास) की बात मैं भूल नहीं रहा हूँ। वे भी आस-पास बहुत है। लेकिन शिरीष के साथ आरग्वध की तुलना नहीं की जा सकती। वह पन्द्रह-बीस दिन के लिए फूलता है, वसंत ऋतु के पलाष की भाँति। कबीर दास को इस तरह पन्द्रह दिन के लिए लहक उठना पसंद नहीं था। यह भी क्या कि 'दस दिन फूले और फिर खंखड़-के-खंखड़ ''दिन दस फूला, फूलिके खंखड़ भया पलास''। फूल है शिरीष। वसन्त के आगमन के साथ लहक उठता है, आषाढ़ तक तो निश्चित रूप से मस्त बना रहता है। मन रम गया तो भरे भादों में भी निर्घात फूलता रहता है। जब उमस से प्राण उबलता रहता है और लू से हृदय सूखता रहता है, एकमात्र शिरीष कालजयी अवधूत की भाँति जीवन की अजेयता का मंत्र-प्रचार करता है। यद्यपि कवियों की भाँति हर फूल-पत्ते को देखकर मुग्ध होने लायक हृदय विधाता ने नहीं दिया है, पर नितांत ठूँठ भी नहीं हूँ। शिरीष के पुष्प मेरे मानस में थोड़ी हिल्लोल जरूर पैदा करते हैं।

शिरीष के वृक्ष बड़े और छायादार होते हैं। पुराने भारत का रईस जिन मंगल-जनक वृक्षों को अपनी वृक्ष-वाटिका की चहारदीवारी के पास लगाया करता था, उनमें एक शिरीष भी है। (वृहत् संहिता 5513) अशोक, अरिष्ट (रीठा का वृक्ष), पुन्नाग और शिरीष के छायादार और घन मसृण हरीतिमा से परिवेष्टित वृक्ष-वाटिका जरूर बड़ी मनोहर दिखती होगी। वात्स्यायन ने (काम सूत्र में ) बताया है कि वाटिका के सघन छायादार वृक्षों की छाया में ही झूला (दोला) लगाया जाना चाहिए। यद्यपि पुराने कवि बकुल (मौलसिरी) के पेड़ में ऐसी दोलाओं को लगा देखना चाहते थे, पर शिरीष भी क्या बुरा है?डाल इसकी अपेक्षाकृत कमजोर जरूर होती है, पर उसमें झूलनेवालियों का वजन भी तो बहुत ज्यादा नहीं होता। कवियों की यही तो बुरी आदत है कि वजन का एकदम ख्याल नहीं करते। मैं तुंदिल नरपतियों की बात नहीं कह रहा हूँ, वे चाहें तो लोहे का पेड़ बनवा लें।

शिरीष का फूल संस्कृत-साहित्य में बहुत कोमल माना गया है। मेरा अनुमान है कि कालिदास ने यह बात शुरू-शुरू में प्रचारित की होगी। उनका कुछ इस पुष्प पर पक्षपात था (मेरा भी है) कह गए हैं, शिरीष पुष्प केवल भौरों के पदों का कोमल दबाव सहन कर सकता है, पक्षियों का बिलकुल नहीं– **पदं सहेत भ्रमरस्य पेलवं शिरीष पुष्पं नः पुन पतत्रिणाम्।** अब मैं इतने बड़े कवि की बात का विरोध कैसे

करूँ ? सिर्फ विरोध करने की हिम्मत न होती तो भी कुछ कम बुरा नहीं था। यहाँ तो इच्छा भी नहीं है। खैर, दूसरी बात कह रहा था। शिरीष के फूलों की कोमलता देखकर परवर्ती कवियों ने समझा कि उसका सब–कुछ कोमल है। यह भूल है। इसके फल इतने मजबूत होते हैं कि नए फूलों के निकल आने पर भी स्थान नहीं छोड़ते। जब तक नए फल-पत्ते मिलकर धकियाकर उन्हें बाहर नहीं कर देते तब तक वे डटे रहते हैं। वसंत के आगमन के समय जब सारी वनस्थली पुष्प-पत्र से मर्मरित होती रहती है, शिरीष के पुराने फल बुरी तरह खड़खड़ाते हैं। मुझे इनको देखकर उन नेताओं की बात याद आती है, जो किसी प्रकार जमाने का रुख नहीं पहचानते और जब तक नयी पौध के लोग उन्हें धक्का मारकर निकाल नहीं देते तब तक जमे रहते हैं।

मैं सोचता हूँ पुराने की यह अधिकार – लिप्सा क्यों नहीं समय रहते सावधान हो जाती ? जरा और मृत्यु, ये दोनों ही जगत के अति परिचित और अतिप्रामाणिक सत्य हैं। तुलसीदास ने अफसोस के साथ इनकी सच्चाई पर मुहर लगाई थी– 'धरा को प्रमान यही तुलसी जो फरा, सो झरा जो बरा, सो बुताना।' मैं शिरीष के फूलों को देखकर कहता हूँ कि क्यों नहीं फलते ही समझ लेते बाबा कि झड़ना निश्चित है। सुनता कौन है ? महाकाल देवता सपासप कोड़े चला रहे हैं, जीर्ण और दुर्बल झड़ रहे हैं; जिनमें प्राणकण थोड़ा भी ऊर्ध्वमुखी है, वे टिक जाते हैं। दुरन्त प्राणधारा और सर्वव्यापक कालाग्नि का संघर्ष निरन्तर चल रहा है। मूर्ख समझते हैं कि जहाँ बने हैं वहीं देर तक बने रहें तो काल देवता की आँख बचा जाएँगे। भोले हैं वे । हिलते-डुलते रहो, स्थान बदलते रहो, आगे की ओर मुहँ किए रहो तो कोड़े की मार से बच भी सकते हो। जमें कि मरे।

कई एक बार मुझे मालूम होता है कि यह शिरीश एक अद्‌भुत अवधूत है दुःख हो सुख, वह हार नहीं मानता। न ऊधो का लेना, न माधो का देना। जब धरती और आसमान जलते रहते हैं, तब भी यह हज़रत न - जाने कहाँ से अपने लिए रस खींचते रहते हैं। मौज में आठों याम मस्त रहते है। एक वनस्पतिशास्त्री ने मुझे बताया है कि यह उस श्रेणी का पेड़ है जो वायुमंडल से अपना रस खींचता हैं। जरूर खींचता होगा, नहीं तो भयंकर लू के समय इतने कोमल ततुंजाल और ऐसे सुकुमार केसर को कैसे उगा सकता था। अवधूतों के मुँह से ही संसार की सबसे सरस रचनाएँ निकली हैं। कबीर बहुत-कुछ इस शिरीष के समान ही थे मस्त और बेपरवाह, पर सरस और मादक। कालिदास भी जरूर अनासक्त योगी रहे होंगे। शिरीष के फूल फक्कड़ाना मस्ती से ही उपज सकते हैं और मेघदूत का काव्य उसी प्रकार के अनासक्त अनाविल उन्मुक्त हृदय में उमड़ सकता है। जो कवि अनासक्त नहीं रह सका, जो फक्कड़ नहीं बन सका, जो किए-कराए का लेखा–जोखा मिलाने में उलझ गया, वह भी क्या कवि है ? कहते हैं कर्णाट-राज की प्रिया विज्जिकादेवी ने गर्वपूर्वक कहा था कि एक कवि ब्रह्मा थे, दूसरे वाल्मीकि और तीसरे व्यास। एक ने वेदों को दिया, दूसरे ने रामायण और तीसरे ने महाभारत को। इनके अतिरिक्त और कोई यदि कवि होने का दावा करे तो मैं कर्णाट–राज की प्यारी रानी उनके सिर पर अपना बायाँ चरण रखती हूँ **(तेषां मूर्ध्नि ददामि वामचरणं कर्णाट-राजप्रिया)**। मैं जानता हूँ कि इस उपालम्भ से दुनिया का कोई कवि हारा नहीं है, पर इसका मतलब यह नहीं कि कोई लजाये नहीं तो उसे डाँटा भी न जाए। पर मैं कहता हूँ कवि बनना है मेरे दोस्तो, तो फक्कड़ बनो। शिरीष की मस्ती की ओर देखो; लेकिन अनुभव ने मुझे बताया है कि कोई किसी की सुनता नहीं। मरने दो।

कालिदास वजन ठीक रख सकते थे क्योंकि वे अनासक्त योगी की स्थिर प्रज्ञता और विदग्ध प्रेमी का हृदय पा चुके थे। कवि होने से क्या होता है ? मैं भी छंद बना लेता हूँ, तुक जोड़ लेता हूँ और कालिदास भी छंद बना लेते थे – तुक भी जोड़ ही सकते होंगे। इसलिए हम दोनों एक श्रेणी के नहीं हो जाते। पुराने सहृदय ने किसी ऐसे ही दावेदार को फटाकरते हुए कहा था –**'वयमपि कवयः कवयः कवयस्ते कालिदासद्याः'।** मैं तो मुग्ध और विस्मय–विमूढ़ होकर कालिदास के एक-एक श्लोक को देखकर हैरान हो जाता हूँ। अब इस शिरीष के फूल का ही एक उदाहरण लीजिए। शकुन्तला बहुत सुंदर थी। सुंदर क्या होने से कोई हो जाता है ? देखना चाहिए कि कितने सुंदर हृदय से वह सौन्दर्य डुबकी लगाकर निकला है। शकुन्तला कालिदास के हृदय से निकली थी। विधाता की ओर से कोई कार्पण्य नहीं था, कवि की ओर से भी नहीं। राजा दुष्यन्त भी अच्छे-भले प्रेमी थे। उन्होंने शकुन्तला का एक चित्र बनाया था; लेकिन रह-रहकर उनका मन खीझ उठता था। उहूँ, कहीं-न-कहीं' कुछ छूट गया है। बड़ी देर के बाद समझ में आया कि शकुन्तला के दोनों कानों में उस शिरीष पुष्प को देना भूल गए हैं, जिसके केसर गंडस्थल तक लटके हुए थे, और रह गया हैं शरच्चन्द्र की किरणों के समान कोमल और शुभ्र मृणाल का हार।

कालिदास सौन्दर्य के बाह्य आवरण को भेदकर उसके भीतर तक पहुँच सकते थे, दुःख हो कि सुख, वे अपना भाव-रस उस अनासक्त कृषीवल की भाँति खींच लेते थे, जो निर्दलित ईक्षुदंड से रस निकाल लेता है। कालिदास महान् थे, क्योंकि वे अनासक्त रह सके थे। कुछ इस श्रेणी की अनासक्त आधुनिक हिन्दी के कवि सुमित्रानंदन पंत में है। कविवर रवीन्द्रनाथ में यह अनासक्ति थी। एक जगह उन्होंने लिखा है–'राजोद्यान का सिंहद्वार कितना ही अभ्रभेदी क्यों न हो, उसकी शिल्पकला कितनी ही सुन्दर क्यों न हो, वह यह नहीं कहता कि हममें आकर ही सारा रास्ता समाप्त हो गया । असल गंतव्य स्थान उसे अतिक्रम करने के बाद ही है। यही बताना उसका कर्त्तव्य है। फूल हो या पेड़, वह अपने-आप में समाप्त नहीं है। वह किसी अन्य वस्तु को दिखाने के लिए उठी हुई अँगुली है, एक इशारा है।

शिरीष तरु सचमुच पक्के अवधूत की भाँति मेरे मन में ऐसी तंरगें जगा देता है जो ऊपर की ओर उठती रहती हैं। इस चिलकती धूप में इतना सरस वह कैसे बना रहता है ? क्या ये बाह्य परिवर्तन– धूप, वर्शा, आँधी, लू, अपने आप में सत्य नहीं है ? हमारे देश के ऊपर से जो यह मारकाट, अग्निदाह, लूट-पाट, खून-खच्चर का बवंडर बह गया है, उसके भीतर भी क्या स्थिर रहा जा सकता है ? शिरीष रह सका है। अपने देश का एक बूढ़ा रह सका था। क्यों, मेरा मन पूछता है कि ऐसा क्यों सम्भव हुआ ? क्योंकि शिरीष भी अवधूत है। शिरीष वायुमंडल से रस खींचकर इतना कोमल और इतना कठोर हो सका था। मैं जब-जब शिरीष की ओर देखता हूँ तब-तब हूक उठती है – हाय वह अवधूत आज कहाँ है ?

•••

**शब्दार्थ–**

धरित्री – धरती / निर्धूम – धुआँ रहित / कर्णिकार – कनेर (कनियार) नामक फूल / आरग्वध – अमलतास नामक फूल / खंखड़ – ठूँठ शुष्क / निर्घात – बिना आघात या बाधा के / अवधूत – सांसारिक बन्धनों एवं विशय वासनाओं से ऊपर उठा हुआ योगी / आगमन – आने / कालजयी – काल को जीतने वाला या काल से अप्रभावित / विधाता – ब्रह्मा / नितांत – एकदम / ठूँठ – शुष्क /

हिल्लोल – लहर / अरिश्ठ – रीठा नामक वृक्ष / पुन्नाग – एक बड़ा सदाबहार पेड़ / घन–मृसण – घना, चिकना (गहन चिकना / मुलायम) / हरीतिमा – हरियाली / परिवेष्टित – आच्छादित, ढका हुआ / सपासप – एक प्रकार की ध्वनि जो कोड़े मारते समय निकलती है, जो जल्दी का अर्थ ध्वनित करती है / मनोहर – मन को हरने वाली सुन्दर / दोला – झूला / बकुल – मौलसिरी का पेड़ / तुंदिल – तोंद वाले, मोटे पेट वाले / परवर्ती – बाद के / मर्मरित – (पत्तों की) खड़खड़ाहट या सरसराहट की ध्वनि से युक्त / जीर्ण – सड़े गले, कमजोर / ऊर्ध्वमुखी – ऊपर को मुख यानि प्रगति की दिशा में / दुरंत – जिसका विनाश होना मुश्किल है / हज़रत – श्रीमान् (व्यंग्यात्मक स्वर) / अनासक्त – मोह–माया, विषय वासनाओं से मुक्त / अनाविल – स्वच्छ / मेघदूत – कालिदास के द्वारा चरित खण्डकाव्य / लेखा–जोखा – हिसाब–किताब / कर्णाट – कर्नाटक राज्य का प्राचीन नाम / उपालम्भ – उलाहना / विदग्ध – अच्छी तरह से तपा हुआ / विस्मय – आश्चर्य / कार्पण्य – कृपणता, कंजूसी / गण्डस्थल – गाल तक / शुभ्र – श्वेत / मृणाल – कमल नाल / कृशीवल – किसान / निर्दलित – अच्छी तरह निचोड़ा हुआ / ईक्षुदण्ड – ईख (गन्ने) का तना / अभ्रभेदी – गगन चुम्बी / गतंव्य – लक्ष्य, पहुँचने का स्थान / धरा – पृथ्वी।

## वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'हाय, वह अवधूत आज कहाँ है?' इस पंक्ति में अवधूत शब्द का प्रयोग किसके लिए हुआ है–
   (क) कबीर (ख) शिरीष
   (ग) आरग्वध (घ) गांधी ( )
2. 'मेघदूत' किसकी रचना है ?
   (क) कबीर (ख) तुलसी
   (ग) कालिदास (घ) वाल्मीकि ( )
3. 'शिरीष के फूल ' निबन्ध है–
   (क) ललित निबन्ध (ख) वस्तुनिष्ठ निबन्ध
   (ग) आलोचनात्मक निबन्ध (घ) ऐतिहासिक निबन्ध ( )
4. प्राचीन 'कर्णाट राज्य' का आधुनिक नाम क्या है ?
   (क) कर्नाटक (ख) तमिलनाडु
   (ग) केरल (घ) आसाम। ( )

## अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. 'धरित्री निर्धूम अग्निकुंड बनी हुई थी' पंक्ति से क्या आशय है ?
2. शिरीष का फूल संस्कृत साहित्य में कैसा माना जाता है ?
3. 'कबीर बहुत' कुछ इस शिरीष के समान ही थे' लेखक ने ऐसा क्यों कहा ?
4. 'उधो का लेना, न माधो का देना' का अर्थ लिखिए।

## लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. 'दिन दस फूला फूलिके खंखड़ भया पलास' इस पंक्ति का भावार्थ लिखिए।

2. 'धरा को प्रमान यही तुलसी जो फरा सो झरा, जो बरा सो बुताना '। इस पंक्ति में तुलसी दास जी ने क्या संदेश दिया हैं ?

3. लेखक के अनुसार कवि के लिए कौन-से गुण आवश्यक हैं ?

4. लेखक ने 'शिरीष के फूल' को कालजयी अवधूत की तरह क्यों बताया है ?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. लेखक के अनुसार कोमल और कठोर दोनों भाव किस प्रकार गांधी के व्यक्तित्व की विशेषता बन गए ?

2. 'शिरीष के फूल' ललित निबन्ध के माध्यम से द्विवेदी जी ने क्या संदेश दिया है ?अपने शब्दों में लिखिए।

3. ललित निबन्ध के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए 'शिरीष के फूल' निबन्ध की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

4. सुनता कौन हैं ? महाकाल देवता सपासप कोड़े चला रहे हैं, जीर्ण और दुर्बल झड़ रहे हैं। जिनमें प्राण-कण थोड़ा भी ऊर्ध्वमुखी है, वे टिक जाते हैं। द्विवेदी जी के इस कथन में क्या संकेत निहित है ? स्पष्ट कीजिए।

5. पाठ में आए निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए–

(क) ''जो कवि अनासक्त..... क्या कवि है।''

(ख) ''दुःख हो कि सुख..... अनासक्ति थी।''

(ग) ''क्यों मेरा मन.....आज कहाँ है ?''

(घ) ''जब उमस से प्राण..... प्रचार करता रहता है।''

•••